International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 15-12-2022, Accepted: 01-01-2023, Published: 17-01-2023
Volume 9, Issue 1, 2023, Page No. 7-9

स्वातंत्रोत्तर हिंदी कहानी में प्रेम का बदलता स्वरूप

कुसुम सबलानिया
शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

सारांश
इस शोध पत्र में हिंदी कहानी में आरंभ से लेकर वर्तमान समय तक कि प्रेम कहानियों के माध्यम से संबंधों में आए बदलाओं को समझने की कोशिश की गई है। 'उसने कहा था' से लेकर हम 'अगली शताब्दी के प्यार का रिहर्सल' तक पहुँच गए हैं। इस पूरी यात्रा को अगर प्रेम कहानियों में आए बदलाओं के जरिए देखें तो जहां प्रेम का संबंध भावनाओं से था वहीं आज भौतिकता से है। प्रेम अब एक वस्तु की भांति ही है। हिंदी कहानियों ने इसे बखूबी अभिव्यक्त किया है। समय और समाज में आए बदलावों के साथ प्रेम में भी बदलाव आया हैं। इन बदलाओं को इस शोध–पत्र के जरिए रेखांकित करने की कोशिश की गई है।

मूल शब्दः प्रेम, वासना, संबंध, कांट्रैक्ट, बेवफाई, कैरियर, देह

कहानी अपने समय और समाज की नब्ज को पकड़ने वाली विधा है। समय और समाज की नब्ज को टटोलती हुई कहानी, आगत समय की चुनौतियों को भी दर्ज करती है। इसलिए कहानी कई बार अपने समय का अतिक्रमण भी करती है। इसी अतिक्रमण में आगत समय के संकेत होते हैं। प्रेमचंद की कहानियों और उपन्यासों में इसको देख सकते हैं। 'गोदान का गोबर, 'किसान' से शहर जाकर 'मजदूर' बन जाता है'। 'किसान' का 'मजदूर' हो जाना, हमें आगत समय का ही संकेत देता है जिसे बाद के दशकों में हम फलीभूत होते देख सकते हैं। कथा साहित्य की यही ताकत है। वह सिर्फ यथार्थ का मालवाहक नहीं है बल्कि समय और समाज के प्रश्नों से टकराने और उसे आगे का रास्ता दिखाने वाली विधा है। यथार्थ का चित्रण उसका एक पक्ष है न कि संपूर्णता। इसलिए कहानी को और खासकर स्वतन्त्रता पूर्व की कहानियों को समझने के लिए यथार्थ का टूल्स पर्याप्त नहीं है। उसकी कई अन्य परतें भी हैं। इसी तरह यथार्थ की भी कई परतें हैं। इसलिए यथार्थ तक पहुँचने के लिए आलोचक को इन परतों को खोलना होगा। कहानी को यथार्थ के आलोक में देखने वाले आलोचकों के सामने राजकुमार अपने लेख 'कहानी पच्चीस साल की' में लिखते हैं कि– "कहानी बोरे की तरह है। और यथार्थ माल की तरह। कहानी इस बाहर पड़े यथार्थ रूपी माल को अपने भीतर भरती है। यथार्थ के वजन से कहानी की श्रेष्ठता या महानता का मूल्यांकन होता है। जिसमें जितना ज्यादा यथार्थ, उतनी ही बड़ी वह कहानी। कहानी न हुई गोया भारवाही ट्रक हुआ । शुरुआत यदि रूपक से हो ही गई है तो एक रुपक और सही। इसका भी मजा लेंरू यथार्थ एक चूहा है और कहानी चूहेदानी। कहानीकार इस यथार्थ रूपी चूहे को मारना नहीं चाहता, रचना रूपी चूहेदानी में कैद कर लेना चाहता है। स्पष्ट है कि अच्छी कहानी वह हुई जो बाहर फूदकते यथार्थ रूपी चूहे को कैद करने में सफल रही। सवाल यह है कि क्या कहानी पहले से ज्ञात यथार्थ को सिर्फ पुनर्प्रस्तुत करती है? यदि ऐसा है तो फिर कहानी पढ़ने लिखने की सार्थकता क्या है? ऐसा क्यों होता है की एक अच्छी कहानी पढ़ने के बाद हमें लगता है कि इस श्यथार्थश का कुछ एहसास तो हमें भी था। किंतु कहानी पढ़ने से पहले हम उसे उस ढंग से नहीं समझ पाए थे। कहने का आशय यह है कि जिसे हम औसत हिंदी आलोचना में श्यथार्थश कहते हैं, उसका बोध कहानी पढ़ने के बाद (उससे पहले नहीं) होता है जैसे समाज विज्ञान की अच्छी पुस्तक पढ़ने से समाज की समझ समृद्ध होती है वैसे ही अच्छी कहानी पढ़ने से 'यथार्थ' को समझने की दृष्टि मिलती है। यथार्थ पुकार–पुकार कर अपनी व्याख्या स्वयं नहीं करता।[1]" आलोचक को कहानी की परतों को खोलते हुए यथार्थ तक पहुँचना होता है। तभी वह उस मर्म तक पहुँच सकता है जिसे लेखक ने दर्ज किया है।

प्रेम कहानियों के संदर्भ में तो इसे और बारीकी से समझना चाहिए। 'उसने कहा था' हिंदी की पहली प्रेम कहानी है, वह भी प्रेम की अधूरी कहानी है। उसके बावजूद भी यह कहानी कथ्य और कहन की शैली के जरिए प्रेम की पूर्ण अभिव्यक्ति करती है। आचार्य रामचद्र शुक्ल ने इस कहानी के विषय में लिखा–"इसमें पक्के यथार्थवाद के बीच, सुरुचि की चरम मर्यादा के भीतर, भावुकता का चरम उत्कर्ष अत्यंत निपुणता के साथ संपुटित है। घटना इसकी ऐसी है जैसी बराबर हुआ करती है पर उसके भीतर से प्रेम का एक स्वर्गीय स्वरूप झांक रहा है–केवल झांक रहा है, निर्लज्जता के साथ पुकार या कराह नहीं रहा। कहानी भर में कहीं प्रेम की निर्लज्ज प्रगल्भता, वेदना की वीभत्स विवृत्ति नहीं है। सुरुचि के सुकुमार से सुकुमार स्वरूप पर कहीं आघात नहीं पहुँचता। इसकी घटनाएँ ही बोल रही हैं, पात्रों के बोलने की अपेक्षा नहीं है"।[2] इस कहानी को लिखे आज 100 वर्ष से ज्यादा हो गए हैं। इन सौ वर्षों के बाद भी प्रेम कहानी की बात 'उसने कहा था' के बिना अधूरी ही लगती है और इन वर्षों में बहुत सारी प्रेम कहानियाँ लिखी गई लेकिन वह प्रेम के भावनात्मक रूप के बजाय भौतिक रूप को ही दिखाती हैं। इन कहानियों में प्रेम एक शर्त, एक जुआ, देह, कैरियर और अवसर के रूप में ही अभिव्यक्त हुआ है। अखिलेश की एक कहानी है–'अगली शताब्दी के प्यार का रिहर्सल' यह कहानी 21वीं सदी के प्रेम का नग्न चित्रण प्रस्तुत करती है– "वह (जितेंद्र) दुखी था कि 'सोने की चिड़ियाँ'' (दीपा) हाथ से फुर्र हो गई है।"[3] जितेंद्र की यह सोच ही वर्तमान युग के प्रेम को दर्शाती है। यहाँ प्रेम होता नहीं है बल्कि सोच समझ कर किया जाता है और प्रेम करने से पहले सबकुछ भाँप लिया जाता है। यहाँ प्रेम का भावना से दूर–दूर तक कोई रिश्ता नहीं है। जितेंद्र को दीपा 'सोने की चिड़ियाँ' समझता था। उसके लिए वह प्रेमिका नहीं बल्कि कैरियर और आगे बढ़ने की सीढ़ी है। यही स्थिति दीपा की भी है– "जितेंद्र को प्यार के लिए सुपात्र पाने के कई कारण थे। मसलन उससे विवाह करते समय जाति का कोई लफड़ा नहीं होना था क्योंकि वह उसी की कास्ट का था। दूसरा, जितेंद्र के घरवालों की दशा कुछ खास अच्छी नहीं तो खास बुरी भी नहीं थी। तीसरा, वह ऐसा प्रखर बुद्धिजीवी था जो आईएएस की तैयारी भी कर रहा

था। साथ ही कॉलेज के दिनों में बैडमिंटन का खिलाड़ी रह चुका था। वैसे आईएएस बनने की दिशा में ही उसका भविष्य दुरुस्त दिखाई पड़ रहा था, क्योंकि पिछली और पहली बार ही इंटरव्यू तक पहुंच गया था। असफल होने पर उसने भाग्य को कोसा था और आगे के लिए पढ़ाई में जुट गया था। इस बार भी वह इंटरव्यू तक पहुंच गया था और उसमें सफल होने के लिए कमर कस कर भिड़ा हुआ था"[4] वास्तव में यही आधुनिक प्रेम का स्वरूप है। अब 'प्रेम न बाडी उपजे, प्रेम न हाट बिकाई' वाली उक्ति 'आउटडेटिड' हो गई है। यहाँ सबकुछ बाजार से ही तय हो रहा है क्योंकि हाट भावनाओं को भी बेच रहा है। इसलिए तो दीपा, जितेंद्र से नहीं बल्कि उसके उज्ज्वल भविष्य से प्रेम करती है और जितेंद्र, दीपा से नहीं बल्कि उसके पिता के रुतबे से प्रेम करता है– "जितेंद्र शुरू–शुरू में दीपा को अपने लिए फिट फाट नहीं पाता था, क्योंकि वह उसकी सुंदरता की कसौटी पर खोटी थी। इसलिए दीपा द्वारा संकेत देने पर भी वह विमुख रहा, पर बाद में उसने विचार बदला, थोड़ा बहुत रोमांस इससे भी कर लेने में हर्ज क्या है? और वह शुरू हो गया। पर जब उसे पता चला कि दीपा इकलौती संतान है और पिता बहुत धनी, साथ ही राजनीति में भी उनके सितारे चमकने के आसार हैं, तो विचारों में आमूलचूल परिवर्तन आ गया, वह सचमुच दीपा से प्यार करने लगा।"[5] 21वीं सदी के प्रेम का यही असली चेहरा है।

हिंदी कहानी की सुदीर्घ परंपरा में प्रेम कहानियाँ अलग–अलग दौर में लिखी गईं। लेकिन आजादी के बाद की प्रेम कहानियों में भाषा से लेकर कथ्य तक में बहुत परिवर्तन नज़र आता है। यह कहानियाँ अपने समय के साथ–साथ भविष्य को भीअभिव्यक्त करती हैं। यहाँ प्रेम सामाजिक यथार्थ के रूप में दैहिक सुख के इर्दगिर्द ही नज़र आता है। इसमें भी अवैध संबंधों को स्वतन्त्रता और देह की आजादी के खोल में लपेट कर अभिव्यक्त किया गया है। 21वीं सदी की ज़्यादातर प्रेम कहानियाँ इसी कथानक पर रची गई हैं। इसलिए कहानी के महत्वपूर्ण आलोचक सूरज पालीवाल चिंतन के साथ चिंता व्यक्त करते हुए लिखते हैं कि– "अब जीवन की आपाधापी और सब कुछ पा लेने की चाह में प्रेम के लिए बहुत कम जगह बची है, लेकिन प्रेम तो आदिम भावना है। मनुष्य जब तक रहेगा प्रेम भी करता रहेगा और प्रेम कहानियां भी लिखता रहेगा इसलिए 'दस्विदानियां' (पंकज सुबीर), 'वो जो अव्यक्त हैं' (ज्ञानप्रकाश विवेक) तथा 'उनके पर जानें और ये आसमां जानेश (आशुतोष) इस दृष्टि से जीवन में प्यार को नए तरीके से व्यक्त करने वाली कहानियां है। पंकज सुबीर 20 वर्ष पीछे लौटते हैं, जब तबके वित्त मंत्री (मनमोहन सिंह) ने बाजार के लिए अपने देश की सीमाएं निर्बाध कर दी थीं। पंकज सुबीर तब अपने साथ पढ़ने वाली लड़की से प्यार में बोले गए झूठ का कंफेशन ई–मेल के द्वारा करते हैं। 20 साल पहले ई–मेल इतना लोकप्रिय नहीं था, आज है तो उसका उपयोग कहानी में होना चाहिए।"[6] सूरज पालीवाल समय के साथ चीजों के बदलने को रेखांकित करते हैं। कहानी अपने समय और समाज में आ रहे बदलावों को दर्ज करती है। अब प्रेम में चिट्ठी नहीं बल्कि ई–मेल के जरिए संदेश का आदान–प्रदान होता है। इस बात को आगे बढ़ाते हुए पालीवाल लिखते हैं– "एक समय प्यार की भावुकता कहानी का आधार होती थी लेकिन अब उस भावुकता से अलग ऐसी कहानी लिखीं जा रही हैं जिनमें प्यार पाना या ना पाना कोई अर्थ नहीं रखता। अर्थ रखता है वह बोझ जो 20 साल से सिर पर लदा हुआ था। कहानीकार उस बोझ को जीवन के बोझ से थक कर उतार देना चाहता है। कहानी प्रेम के विरोध में नहीं है, यह एक प्रकार से प्रेम का ही विस्तार है, ईमानदार विस्तार। जहां प्रेम करने वाला युवक अपने परिवार के साथ जीते हुए पुराने झूठ को उगल देना चाहता है। वह जानता है कि प्रेमिका के लिए इस कन्फेशन के कोई मायने नहीं होंगे, जो कहानी को और गहराई प्रदान करती है। वह यह भी जानता है कि जिस मित्र के विरोध में उसने झूठे किस्से गढ़े थे, वह भी उसके ई–मेल से नाराज होगा। कोई भी कंफेशन दुनियादारी के विरोध में ही होता है। यह एक प्रकार से उस सच्चाई से सामना करना होता है, जिसे समय के दबाव में छुपाया गया था। पंकज सुबीर इस कन्फेशन के माध्यम से 20 साल की सीमाओं को ही नहीं लांघते वरन् 20 साल पहले और बाद के समय की स्थितियों पर प्रकाश डालते हैं। ज्ञानप्रकाश विवेक की 'वह जो अव्यक्त है' टीवी सैनिटोरियम में पड़े अकेले पारिवारिक षड्यंत्र के शिकार हुए बीमार युवक की पल–पल रिसते जीवन की कहानी है, जिसे एक नर्स अपने कोमल मन से उभारती है। यह प्यार की नई परिभाषा है, जिसमें उदारता है। 21वीं सदी में ऐसी उदात्त प्रेम की कहानियों पर विश्वास कम ही जमता है, क्योंकि यह समय तो परस्पर दगा देने और धोखा में रखने का समय है।"[7] इस तरह से प्रेम का जो बदलता स्वरूप है वह हम आज की कहानियों में देख सकते हैं।

आजादी के बाद की कहानियों में प्रेम का वह उदात रूप नज़र नहीं आता है। यहां प्रेम कुंठा और वासन के बीच 'गिव एंड टेक' के तौर पर दिखाई देता है। हिंदी की कमोबेश सभी प्रेम कहानियों में एक जैसा ही पैटर्न रहा है। शैली में कुछ बदलाव नज़र आता है लेकिन कथ्य वही होता है । 'ज्ञानोदय' पत्रिका के प्रेम विशेषांक से लेकर 'बेवफाई विशेषांक तक की कहानियों को देखें तो उनमें प्रेम का भौतिक रूप ही दिखाई देता है। यहाँ प्रेम, संबंध से ज्यादा कांट्रैक्ट जैसा नज़र आता है। इसे हम समय के साथ बदलते मूल्यों और जीवन शैली के रूप में भी देख सकते हैं। लेकिन वहीं आज भी प्रेमिका के लिए प्रेमी के मापदंड वही हैं। वह स्त्री या प्रेमिका को आज भी निजी संपत्ति के रूप में देखता है। इस पूरी मानसिकता को शैलेंद्र की कहानी 'रूपान्तरण' में हम देख सकते हैं– "स्त्री अपने प्रेम में जब अपना सर्वस्व अर्पित कर देती है तो पुरुष का विजय भाव चरम पर होता है और स्त्री जब अपना अभीष्ट पा लेती है तो कितनी विनम्र और कृतज्ञ महसूस करती है। कभी किसी को पूरे लाव लश्कर से अपनी जिंदगी में लाकर भी उसकी पदचाप नहीं सुनाई पड़ती जिसके आने का हम लंबे वक्त तक इंतजार करते हैं। स्त्रियों की सुंदरता और उनके व्यक्तित्व की खूबियों के मापदंड भी उनकी जीवन पद्धति, त्याग, संयम, सहनशक्ति, पीड़ा आदि से तय होते हैं। भोर से रात तक बिना बोले खटती रहे तो वह आदर्श स्त्री है। समस्त अपमान और अत्याचार सहकर भी विनम्र और विनीत रहे तो उसके संस्कार कुलीन और उच्च हैं, कुलबुलाती भूख को बर्दाश्त कर सबके बाद बचा–कुचा खाकर संतुष्ट हो जाए तो ममता और त्याग की प्रतिमूर्ति है वह।" [8] दरअसल यही समाज की वास्तविकता है। 21वीं सदी होने के बावजूद भी स्त्री के लिए प्रेम में वही बेड़ियाँ हैं जो मध्यकाल से ही पुरुष ने उसे पहनाई थी। प्रेम में भी पुरुष के भीतर का वह पितृसत्तात्मक रूप बरकरार रहता है। वह कभी भी बराबरी के धरातल पर नहीं आता है।

कुलमिलाकर देखें तो हिंदी कहानी में प्रेम का स्वरूप दशक–दर–दशक बदलता हुआ दिखाई देता है। खासकर स्वतन्त्रता के बाद और 21वीं सदी में तो प्रेम की सभी परिभाषाएँ बदल जाती हैं। यहाँ प्रेम दो व्यक्तियों के बीच कांट्रैक्ट जैसा है। इसमें भी प्रेमी का प्रेमिका पर आधिपत्य कई रूपों में देखा जा सकता है। वैसे इस सदी के प्रेम का केंद्र देह है और हिंदी कहानी देह से मुक्ति का नारा देती हुई भी इसी जाल में फंसी है। इसमें भी स्त्री देह, बाजार से लेकर पुरुष तक के आकर्षण का केंद्र है। इसलिए हिंदी की ज़्यादातर प्रेम कहानियाँ भावनाओं से बहुत दूर हैं। उनमें संबंधों के प्रति बेवफाई ही मूल्य है और यही इस दौर की प्रेम कहानियों का मूल भी है।

संदर्भ सूची

1. अखिलेश (सं.), (2011), तद्भव, अंक –24, लखनऊ
2. शुक्ल, रामचंद्र, पांचवां संस्करण (संवत् 2006), हिदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
3. अखिलेश, (2009), शापग्रस्त (कहानी संग्रह), राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पेज– 77–88
4. वही
5. वही
6. कुमार, अरविंद (सं.), (2021), हिंदी कहानीः परख और पहचान, रुद्र पब्लिशर्स, नई दिल्ली
7. वही
8. कालिया, रवीन्द्र (सं.), (2010) नया ज्ञानोदय (पत्रिका), भारतीय ज्ञानपीठ, अंक– 90, दिल्ली